इकाई 2 ब्राह्मण साहित्य

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- 'ब्राह्मण' शब्द के अभिप्राय को जान सकेंगे।
- वेद तथा ब्राह्मण के अन्तर्सम्बन्ध को जान सकेंगे।
- ब्राह्मणों के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- ब्राह्मणों के देशकाल तथा प्रतिपाद्य विषय के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- वैदिक वाङ्मय में ब्राह्मण-साहित्य के महत्त्व को जान सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

वैदिक वाङ्मय के चार स्तम्भों संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद् में से संहिता तथा ब्राह्मण दोनों की ही संयुक्त संज्ञा 'वेद' है–**'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्।'** (आपस्तम्ब. 31)। साथ ही उपासना की कर्मकाण्डीय तथा ज्ञानकाण्डीय पद्धतियों की दृष्टि से भी दोनों का सम्बन्ध समानरूप से 'कर्मकाण्ड' से है। आपस्तम्ब का कथन है कि मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को 'वेद' इसलिये कहा जाता है क्योंकि 'मन्त्रसंहितायें' तथा 'ब्राह्मण' दोनों ही यज्ञ के प्रमाणस्वरूप हैं–**'मन्त्रब्राह्मणयोः यज्ञस्य प्रमाणम्।'** अतः मन्त्रब्राह्मणात्मक वेद कहने का तात्पर्य यही है कि वेदमन्त्रों (संहिताओं) की स्थिति बिना ब्राह्मण ग्रन्थों के पूर्णता को प्राप्त नहीं कर सकती। वैदिक संहिताओं से अतिरिक्त अंश ही ब्राह्मण है–**'शेषे ब्राह्मण शब्दः।'** (मीमांसा सूत्र 2.1.33) जो कि वैदिक मन्त्रों की याज्ञिक दृष्टि से विनियोगात्मक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। अतः वैदिक संहिताओं के अनन्तर उनसे सम्बद्ध ब्राह्मण ग्रन्थों का परिचय प्राप्त करना भी आवश्यक हो जाता है।

2.2 ब्राह्मण-साहित्य – परिचय

वैदिक संहिताओं के शेष (अतिरिक्त) अंश ही ब्राह्मण हैं। जैसा कि जैमिनी का वचन है–**'शेषे ब्राह्मण शब्दः।'** वैदिक वाङ्मय के अन्तर्गत यद्यपि ब्राह्मण ग्रन्थों को भी वेद कहा गया है, तथापि ये (ब्राह्मण ग्रन्थ) वस्तुतः वैदिक मन्त्रों के व्याख्यानरूप हैं जैसा कि सायण ने अपने भाष्य में स्पष्ट किया है–

"यद्यपि मन्त्रब्राह्मणात्मको वेदः, तथापि ब्राह्मणस्य मन्त्रव्याख्यानस्वरूपत्वाद् मन्त्रा एवादौ समाम्नातः।" (तैत्ति. सं, सा०भा०)

ऋग्वेदभाष्यभूमिका में भी कहा गया है–**"अवशिष्टो वेदभागो ब्राह्मणम्"** (ऋ. भा. भू. पृ. 37)

2.2.1 ब्राह्मण शब्द का अर्थ

'ब्राह्मण' शब्द सामान्यतः जातिविशेष तथा ग्रन्थविशेष दोनों अर्थों का वाचक है तथा इसका प्रयोग पुँल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों में प्राप्त होता है किन्तु वैदिक वाङ्मय के परिप्रेक्ष्य में 'ब्राह्मण' शब्द 'ग्रन्थविशेष' अर्थ का प्रतिपादक है तथा केवल

नपुंसकलिङ्ग में ही प्रयुक्त हुआ है– ''**ब्राह्मणं ब्रह्मसंघाते वेदभागे नपुंसकम्।**'' (मेदिनीकोश)

वैदिक वाङ्मय में 'ग्रन्थ' के अर्थ में 'ब्राह्मण' शब्द का प्राचीनतम प्रयोग तैत्तिरीय संहिता में उपलब्ध होता है– **"एतद् ब्राह्मणन्येव पञ्चहवींषि।"** (तै.सं. 3.7.1.1) माधवाचार्य तथा सायणाचार्य ने भी 'ब्राह्मण' शब्द का नपुंसकलिङ्ग तथा 'ग्रन्थविशेष' के अर्थ में ही प्रयोग किया है–

"मन्त्रश्च ब्राह्मणश्चेति द्वौ भागौ, तेन मन्त्रतः अन्यद् ब्राह्मणमित्येदत् भवेद् ब्राह्मणलक्षणम्।"(जैमिनीयन्यायमालाविस्तर 2.1.8)

''अवशिष्टो वेदभागो ब्राह्मणम्।'' (ऋ.भा.भू. पृ.37)

ब्राह्मण शब्द 'ब्रह्म' शब्द में 'अण्' प्रत्यय लगाने पर निष्पन्न होता है। 'ब्रह्म' शब्द दो अर्थों का वाचक है– मन्त्र तथा यज्ञ। इस दृष्टि से 'ब्राह्मण' शब्द का तात्पर्य उन ग्रन्थों से है, जिनमें याज्ञिक दृष्टि से मन्त्रों की विनियोग निर्देशपूर्वक व्याख्या की गयी है। तैत्तिरीय संहिता में अपने भाष्य में भट्टभास्कर ने कहा है– **"ब्राह्मणंनामकर्मणस्तन्मन्त्राणां च व्याख्यानग्रन्थः"** (तै.सं.1.5.1,भट्टभास्करकृतभाष्यम्)। ऐसी भी मान्यता है कि यज्ञ-यागादि विधान करने वाले एकमात्र ब्राह्मण पुरोहितों के निजी ग्रन्थ होने के कारण इन ग्रन्थों को 'ब्राह्मण' कहा गया। वाचस्पतिमिश्र ने एक श्लोक से ब्राह्मण ग्रन्थ के स्वरूप को पूर्णतः स्पष्ट किया है–

"नैरुक्त्यं यस्य मन्त्रस्य विनियोगः प्रयोजनम्।
प्रतिष्ठानं विधिश्चैव ब्राह्मणं तदिहोच्यते।।"

2.2.2 ब्राह्मण ग्रन्थों का देशकाल

ब्राह्मण ग्रन्थों में उपलब्ध भौगोलिक परिवेश से स्पष्ट होता है कि इस ग्रन्थ की आविर्भाव स्थली कुरुपाञ्चाल प्रान्त तथा सरस्वती नदी का अन्तर्वर्ती प्रदेश था। ताण्ड्य ब्राह्मण में सारस्वत प्रदेश का गम्भीर विवेचन हुआ है। तदनुसार सरस्वती के लुप्त होने के स्थल को 'विनशन' तथा उसके पुनः उद्‌गम-स्थल को 'लक्षप्रास्रवण' कहते हैं। (तै.ब्रा. 25.10.21) यमुना तथा सरस्वती और दृषद्वती के मध्यवर्ती प्रदेश तथा उनके सङ्गम आदि का भी ताण्ड्य ब्राह्मण में निर्देश मिलता है। इनमें सर्वप्रमुख सङ्केत हैं– कुरुक्षेत्र को प्रजापति की वेदी मानना। **"एतावती वाव प्रजापतेर्वेदिर्यावत् कुरुक्षेत्रमिति।"** (तां.ब्रा. 25.13.3)। इससे सिद्ध होता है कि ब्राह्मणों का सङ्कलन तथा यज्ञ-यागादि की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा इसी प्रान्त में हुई थी। मनुस्मृति (2/22) के प्रमाणानुसार यही देवनिर्मित प्रदेश 'ब्रह्मावर्त' के नाम से सुप्रसिद्ध हुआ था तथा यही यज्ञ संस्कृति का केन्द्र तथा पीठस्थल है, जहाँ ब्राह्मणों की यज्ञप्रक्रिया की विकासयात्रा सम्पन्न हुई।

इसी प्रकार ब्राह्मणों के प्रणयन काल के निर्धारण के सम्बन्ध में ब्राह्मणों में प्राचीनतम ग्रन्थ 'शतपथ ब्राह्मण' का प्रमाण उल्लेखनीय है। शतपथ ब्राह्मण में एक ज्योतिषीय घटना का उल्लेख किया गया है। तदनुसार कृत्तिका ठीक पूर्वदिशा में उदित होती है। वहाँ से प्रच्युत नहीं होती। प्रसिद्ध ज्योतिषी शङ्कर बालकृष्ण दीक्षित की गणनानुसार इस घटना का काल विक्रम से तीन हजार वर्ष पूर्व निश्चित होना चाहिये जबकि पाश्चात्य विद्वानों में विन्टरनित्ज ने ज्योतिषीय गणनानुसार इस ग्रह स्थिति को 1100 ई.पू. माना है, किन्तु विन्टरनित्ज के द्वारा निर्धारित इस कालसीमा को ब्राह्मण ग्रन्थों

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

का आविर्भाव काल नहीं माना जा सकता क्योंकि ऐसा करने पर वेदाङ्गों को ब्राह्मणों से पूर्ववर्ती मानना पड़ेगा, जो कि सर्वथा अनुचित है। अतः बालकृष्ण दीक्षित के मत को स्वीकार करते हुये ब्राह्मणों के आविर्भाव की अनुमानित सीमा 3000 ई.पू. से लेकर 2000 ई.पू. तक निर्धारित की है जो कि सर्वथा उचित है।

2.2.3 ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रतिपाद्य

वैदिक संहिताओं के स्वरूप तथा प्रतिपाद्य विषय से ब्राह्मण ग्रन्थों का स्वरूप और प्रतिपाद्य विषय सर्वथा भिन्न है। वैदिक संहितायें जहाँ पद्य-गद्य-गानात्मक स्वरूप वाली तथा देवस्तुतिप्रधान हैं, वहीं ब्राह्मण ग्रन्थ एकमात्र गद्यात्मकशैली में रचे गये हैं तथा उनका मुख्य प्रतिपाद्य विषय है– 'यज्ञों की सर्वाङ्गपूर्ण मीमांसा।' ब्राह्मणों में इस प्रतिपाद्य-विषय के प्रतिपादन तथा प्रतिष्ठा के दो मूलाधार हैं– 1. विधि, 2. अर्थवाद।

इनमें 'विधि' से अभिप्राय है–'यज्ञ तथा उसके अङ्गोपाङ्गों के अनुष्ठान का उपदेश।' ये विधियाँ ही ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रधान विषय हैं। शबरस्वामी ने विधियों के दश प्रकारों का निर्देश किया है–

हेतुर्निवचनं निन्दा प्रशंसा संशयो विधिः।
परक्रिया पुराकल्पो व्यवधारण-कल्पना।। (शा.भा. 2.1.8)

विधियों के इन दश प्रकारों में भी प्रधानता 'विधि' की ही है, शेष (अन्य) जितने भी अवान्तर विषय हैं, वे सभी वस्तुतः 'विधि' के ही पोषक हैं। इन अवान्तर विषयों को ही मीमांसकों ने 'अर्थवाद' कहा है। विधि का ही स्तुति तथा निन्दारूप में पोषण या निर्वहन करना ही 'अर्थवाद' है– **"विहितार्थे प्ररोचना निषिद्धकार्ये निवर्तना अर्थवादः।"** इस प्रकार 'विधि' तथा 'अर्थवाद' में अङ्गाङ्गिभाव (पोष्यपोषक भाव) सम्बन्ध है।

ब्राह्मणों में विधि का विधान भी सयुक्तिक है। प्रत्येक विधि के मूल में कोई न कोई 'हेतु' है। अतः उन हेतुओं का निर्देश करना ब्राह्मण का कार्य है। विधि-विधान में किसी मन्त्र का प्रयोग किस उद्देश्य के लिये किया गया है? इसकी भी सयुक्तिक (विनियोगपूर्वक) व्यवस्था भी ब्राह्मण ग्रन्थों में की गयी है। साथ ही स्थान-स्थान पर अनुष्ठेय वस्तुओं (विधियों) की पुष्टि हेतु विविध प्राचीन ऐतिहासिक आख्यान भी दिये गये हैं, जिससे याज्ञिकों की यागों में श्रद्धा उत्पन्न हो। इसी प्रकार निर्वचन या निरुक्त का उदय भी इन्हीं विधियों में प्रयुक्त शब्दविशेष की व्युत्पत्ति दिखाने से होता है। अतः ब्राह्मणों में 'विधि' को केन्द्र में रखकर ही निरुक्ति, स्तुति-निन्दारूप-अर्थवाद, आख्यान, हेतु, वचनादि विविध विषय अपना आवर्तन पूरा करके ब्राह्मणों को सम्पूर्ण कलेवर प्रदान करते हैं।

विषय विवेचन की दृष्टि से ब्राह्मण ग्रन्थों के प्रधानतः सात बिन्दु (विभाग/अंश) हैं–(1) विधि, (2) विनियोग, (3) हेतु, (4) अर्थवाद, (5) निर्वचन, (6) आख्यान, (7) उपनिषद्।

1) **विधि** – 'विधि' का अभिप्राय है– यज्ञों के साङ्गोपाङ्ग अनुष्ठान विधियों का उपदेश अर्थात् यज्ञों का अनुष्ठान कब, कहाँ, कैसे और किसके द्वारा होना चाहिये? यह सब कर्मकाण्डसम्बन्धी विधान 'विधि' भाग से सम्बद्ध है। इन सबका उपदेश ब्राह्मणों में किया गया है। उदाहरणार्थ– ताण्ड्य ब्राह्मण (6/7) में अनेक विधियाँ उपलब्ध होती हैं। वहाँ 'बहिष् पवमान' के लिये अध्वर्यु तथा उद्गाता आदि पाँच ऋत्विजों के प्रसर्पण का विधान किया गया है इसके लिये तीन नियमों

का पालन अत्यावश्यक है– (1) प्रसर्पण के समय ऋत्विजों का धीरे-धीरे पदन्यास, (2) मौन रहना, (3) प्रसर्पण करते समय ऋत्विजों का एक विशेष क्रम में पङ्क्तिबद्ध होकर सञ्चरण करना। अन्यथा (पङ्क्ति टूटने पर) हानि तथा अनर्थ की सम्भावना होती है। इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण तो विधि-विधानों की विपुल राशि का भण्डार है। शतपथ ब्राह्मण की आरम्भिक कण्डिका में ही सहेतुक विधि का निर्देश मिलता है। पौर्णमास इष्टि में दीक्षित होने वाला व्यक्ति आहवनीय और गार्हपत्य अग्नियों के बीच पूरब की ओर खड़ा होकर जल स्पर्श करता है। जलस्पर्श क्यों? जल मेध्य होता है अर्थात् वह यज्ञ के लिये उपयोगी होता है। झूठ बोलने वाला व्यक्ति यज्ञ करने के लिये उपयुक्त नहीं होता। अतः जल का स्पर्श करने से वह पापों को दूर कर मेध्य (पवित्र) बन जाता है तथा पवित्र होकर दीक्षित हो जाता है।

2) **विनियोग** – ब्राह्मण ग्रन्थों में "किस मन्त्र का प्रयोग किस उद्देश्य की सिद्धि के लिये किया जाता है?'' इसकी भी सयुक्तिक व्यवस्था सर्वत्र की गयी है। मन्त्र के अन्तरङ्ग अर्थ से अपरिचित पाठक की मन्त्र के विनियोग को लेकर अश्रद्धा हो सकती है। अतः ब्राह्मणों में मन्त्रों के विनियोग की युक्तिमत्ता सिद्ध की गयी है। ब्राह्मणों में प्रायः मन्त्र के पदों से ही युक्तिमत्ता सिद्ध हो जाती है, जैसे–'**स नः पवस्व शं गवे**' (ऋ.9.11.3) ऋचा का गायन पशुओं की रोगनिवृत्ति के लिये किया जाता है। इसकी सिद्धि मन्त्र के पदों से ही हो जाती है परन्तु कुछ स्थितियों में मन्त्र के विनियोग की युक्तिमत्ता को सिद्ध करना होता है। ब्राह्मणों में ऐसे भी अनेक स्थल हैं, जैसे–'**आ नो मन्त्रवरुणा**' (ऋ.3.62.16) मन्त्र के गायन का विनियोग दीर्घरोगी की रोगनिवृत्ति के लिये है। इस विनियोग की युक्तिमत्ता के विषय में ब्राह्मण का कथन है– मित्रावरुण का सम्बन्ध प्राण तथा अपान से है। दिन के देवता होने से ही मित्र प्राण के प्रतिनिधि हैं तथा रात्रि के देवता होने के कारण वरुण अपान के प्रतीक हैं। अतः दीर्घरोगी के शरीर में मित्रावरुण के रहने की प्रार्थना अन्ततः प्राण तथा अपान को धारण करने का प्रकारान्तर से सङ्केत है। फलतः इस मन्त्र का पूर्वोक्त विनियोग युक्ति सङ्गत है। इस प्रकार मन्त्रों की विनियोगपरक व्याख्या करना भी ब्राह्मण ग्रन्थ का प्रतिपाद्य रहा है।

3) **हेतु** – ब्राह्मण ग्रन्थों में विविध विधियों की पृष्ठभूमि में निहित कारणों पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है, उदाहरणार्थ–अग्निष्टोम याग में 'उद्गाता' 'सदस्' नामक मण्डप में औदुम्बर वृक्ष की शाखा का उच्छ्रयण करता है। औदुम्बर वृक्ष की ही शाखा क्यों? तैत्तिरीय ब्राह्मण सकारण इसकी युक्तियुक्तता को स्पष्ट करता है– प्रजापति ने देवताओं के लिये ऊर्ज का विभाग किया था। उसी से उदुम्बर वृक्ष की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार उदुम्बर वृक्ष का देवता प्रजापति है। उद्गाता का सम्बन्ध भी प्रजापति से है। अतः उद्गाता उदुम्बर की शाखा का उच्छ्रयण अपने प्रथम कर्म से करता है। ब्राह्मणों में प्रतिपादित ये हेतुवचन यागविधियों में श्रद्धा उत्पन्न करने में सहायक होते हैं।

4) **अर्थवाद** – ब्राह्मणों में यज्ञादि में समधिक महत्त्वशाली विधि की प्रशंसा (स्तुति) तथा निषिद्ध पदार्थों की निन्दा के अनेक प्रसङ्ग हैं। यही अर्थवाद कहलाते हैं। अर्थवाद का प्रयोग विधि की आस्थापूर्वक पुष्टि के लिये ब्राह्मणों में किया गया है। जैमिनी ने अर्थवाद के प्रधानतः तीन भेद किये हैं– 1. गुणवाद, 2. अनुवाद, 3. भूतार्थानुवाद। इनमें भूतार्थानुवाद के पुनः सात भेद किये हैं– स्तुत्यर्थवाद, फलार्थवाद, सिद्धार्थवाद, निरर्थवाद, परकृति, पुराकल्प और मन्त्र। इस प्रकार

निन्दा, स्तुति, हेतु, निर्वचन, विनियोग आख्यानादि अर्थवाद में ही समाहित हो जाते हैं।

5) **निर्वचन (निरुक्ति)** – ब्राह्मण ग्रन्थों में शब्दों के निर्वचन (व्युत्पत्ति) का भी स्थान-स्थान पर निर्देश किया गया है। इन निर्वचनों के माध्यम से याग में प्रयोज्य पदार्थ की सार्थकता को निरूपित किया गया है। जैसे–'बृहत्साम' पद के अर्थ की सार्थकता को निरुक्त के माध्यम से ताण्ड्य ब्राह्मण में स्पष्ट किया गया है–**'ततो बृहदनु प्राजायत। बृहन् मर्या इदं स ज्योगन्तरभूदिति तद् बृहतो बृहत्त्वम्।'** (ताण्ड्य ब्रा. 7.6.5) अर्थात् इस साम का 'बृहत्साम' नामकरण इसलिये है, क्योंकि इस साम ने प्रजापति के मन में बृहत्काल तक निवास किया था। ब्राह्मणों में निर्दिष्ट ये निर्वचन भाषावैज्ञानिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। ये ही कालान्तर में निरुक्त के आधार भी बने।

6) **आख्यान** – ब्राह्मण ग्रन्थों में विधि की सयुक्तता को प्रदर्शित करने के लिये विविध रोचक आख्यानों का भी उल्लेख किया गया है। ब्राह्मणों में वर्णित ये आख्यान दो प्रकार के हैं– 1. स्वल्पकाय, 2. दीर्घकाय। इनमें प्रथम प्रकार के आख्यानों में उन कथाओं की गणना है, जो सद्यः एव विधि की सयुक्तिकता को प्रमाणित करते हैं। ऐसे आख्यानों में प्रमुख हैं– वाक् का देवों का परित्याग कर जल और अनन्तर वनस्पति में प्रवेश सम्बन्धी आख्यान। इन लघु आख्यानों में कहीं-कहीं गम्भीर तात्त्विक विषयों का भी सङ्केत मिलता है, जैसे– शतपथ ब्राह्मण में वाणी तथा मन में से मन की श्रेष्ठता प्रतिपादनविषयक आख्यान (शत. ब्रा. 1.4.5.8 –12)। दीर्घ आख्यानों में शुनःशेप आख्यान, पुरुरवा-उर्वशी आख्यान, मनु के द्वारा जलप्लावन के अनन्तर सृष्टि के पुनरारम्भ सम्बन्धी आख्यान। ये आख्यान ब्राह्मणों के नीरस विषयों के मध्य रोचकता का आधान करते हैं।

7) **उपनिषद्** – ब्राह्मणों का उपनिषद् भाग ब्रह्मतत्त्व पर अपनी गहन विवेचना प्रस्तुत करता है।

2.2.4 ब्राह्मणों का महत्त्व

यज्ञात्मक ब्रह्म का स्वरूप जिससे जाना जाता है, वह ग्रन्थ 'ब्राह्मण' है। इसमें वैदिक मन्त्रों की विनियोगात्मक व्याख्या की गयी है। अतः ब्राह्मण ग्रन्थ यज्ञसंस्था के उद्भव तथा विकास को समझने की दृष्टि से अत्यन्त उपादेय हैं। वैदिक वाङ्मय में ब्राह्मण ग्रन्थों का कितना महत्त्व है? इसे कुछ बिन्दुओं से समझ सकते हैं–

1) वैदिक संहिताओं में मन्त्रों का सङ्कलन है जिनका यागानुष्ठानों में विनियोग किया जाता है। किस यज्ञविशेष में किस मन्त्र का विनियोग किया जाना है? किस प्रयोजन विशेष की सिद्धि के लिये कौन सा मन्त्र विहित है? इसका उत्तर ब्राह्मण ग्रन्थों में मिलता है।

2) ब्राह्मणों में यज्ञों को सर्वोपरि कर्म कहा है–**'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।'**(शत.ब्रा. 1.7. 3.5), 'यज्ञ' मानवजाति के लिये किस प्रकार उपयोगी है? यज्ञ क्यों श्रेष्ठ कहे गये हैं? इसका समाधान ब्राह्मण ग्रन्थों में मिलता है कि यज्ञों से मनुष्य का वैयक्तिक उत्थान होता है। उसकी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। बार-बार मृत्यु से छूटना ही मुक्ति है–**'सर्वस्मात् पापात्मनो निर्मुच्यते य एवं विद्वानग्निहोत्रं जुहोति।'** (शत.ब्रा. 11.5.6.9)

3) यज्ञ का द्वितीय फल है– लोककल्याण, क्योंकि यज्ञ में दी गयी हवि अन्तरिक्ष में व्याप्त होकर सूर्य तक पहुँचती है और मेघों के साथ मिश्रित होकर वृष्टि के रूप में पृथिवी का अभिषेक करके प्रजा को धनधान्य से समृद्ध बनाती है। **'अग्निर्वै धूमो जायते धूमादभ्रमभ्राद् वृष्टिः'**(शत. ब्रा. 5.3.5.17)

4) ब्राह्मण-ग्रन्थ वेदों का व्याख्यान रूप हैं। अतः उनमें वैदिक मन्त्रों से सम्बद्ध अनसुलझे प्रश्नों तथा रहस्यों का भी समाधान तथा उत्तर मिलता है, उदाहरणार्थ– वेदों में विविध लोकों से सम्बद्ध देवताओं की स्तुतियाँ हैं, किन्तु कितने लोकदेवता हैं? इसका उत्तर ब्राह्मण देता है कि तीन लोक हैं–**'त्रयो वा इमे लोकाः'** (शत. ब्रा. 1.2.4.20) ये तीन लोक कौन-कौन से हैं? ब्राह्मण बताते हैं– पृथिवी, अन्तरिक्ष तथा द्युलोक, **'पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौः'।** (शत. ब्रा. 11.8.5.1)

5) ब्राह्मण ग्रन्थों में वर्ण व्यवस्था तथा आश्रम व्यवस्था से सम्बन्धित सभी कर्तव्याकर्त्तव्यों का निर्देश किया गया है, जैसे– ब्राह्मणों का शस्त्र यज्ञ है, **एतानि वै ब्राह्मणायुधानि यद्यज्ञायुधानि** (सं. 7.19)। क्षत्रियों का बल युद्ध है, (शत. ब्रा. 13.1.5.6)। वैश्य तो साक्षात् राष्ट्र है क्योंकि उसके धन कमाने पर ही चारों वर्णों का कार्य चलता है। शूद्र का कार्य श्रम है (शत. ब्रा. 13.6.10)। इस प्रकार धर्मशास्त्रों का पूर्वसूत्र ब्राह्मणों में मिलता है।

6) वैज्ञानिक तथा आयुर्वेद की दृष्टि से भी ब्राह्मण ग्रन्थों का चिन्तन महत्त्वपूर्ण है, जिनका समर्थन अद्यावधि किसी न किसी रूप में होता आ रहा है, जैसे– ऋतुओं के सन्धिकाल को व्याधि का कारण ब्राह्मण ग्रन्थों में कहा गया है –**'ऋतुसन्धिषु वै व्याधिर्जायन्ते'** (गो.ब्रा.1.19) रोग के कीटाणुओं को अग्नि भस्मसात् करती है–**'अग्निर्हि रक्षसामपहन्ता'।**(शत.ब्रा.1.2.1.6)। अग्नि का सार सुवर्ण है। अतः आर्य सुवर्ण आभूषण धारण करते थे।

7) ब्राह्मण ग्रन्थों का रेखागणितीय महत्त्व भी है। ब्राह्मण ग्रन्थों में वेदियाँ तक चित्तियां बनाने का विधान है। ये विधान रेखागणित का जनक है। दो अश्र, चार अश्र, द्रोणाकार, वाली वेदियों तथा चित्तियों के निर्माण ने ही रेखागणित का रेखाङ्कन किया।

8) ब्राह्मणों में यज्ञकर्म के विधि-विधानों के साथ ही शास्त्रार्थ पद्धति से कर्मफल, पुनर्जन्म, ब्रह्म, लोक-परलोक नाचिकेताग्नि के रहस्य इत्यादि गम्भीर विषयों का भी उपबृंहण किया गया है जिसका प्रतिफलन हमें कालान्तर में उपनिषद् तथा षड्दर्शनों के रूप में प्राप्त होता है। अतः उपनिषदादि के गम्भीर विषयों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये भी ब्राह्मणों का अध्ययन अनिवार्य है।

9) ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा भाषाविज्ञान की दृष्टि से भी ब्राह्मण नितान्त उपयोगी है। ब्राह्मण ग्रन्थों के विविध आख्यान जहाँ विविधपुराणों के लिये उपजीव्य सिद्ध होते हैं वहीं ब्राह्मणों में कुरु, पाञ्चाल प्रदेशों सरस्वती नदी के उद्गम स्थलादि भौगोलिक परिवेश की भी सूचना मिलती है।

10) भाषाविज्ञान की दृष्टि से भी ब्राह्मण ग्रन्थ की भाषा संहितायुग तथा उपनिषद् युग (दो युगों) की भाषा के मध्य सेतु का कार्य करती है जिससे भाषा के क्रमिक विकास को जाना जा सकता है। इस प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों का महत्त्व अपरिमित है।

2.3 ऋग्वेदीय ब्राह्मण

ऋग्वेद संहिता से सम्बद्ध केवल दो ब्राह्मण उपलब्ध होते हैं– 1.ऐतरेय ब्राह्मण, 2. शाङ्खायन ब्राह्मण।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

2.3.1 ऐतरेय ब्राह्मण

ऋग्वेदीय ब्राह्मणों में ऐतरेय ब्राह्मण का प्रथम स्थान है। यह ब्राह्मण ऋग्वेद की शाकल शाखा से सम्बद्ध है। इसके प्रवचनकर्ता महिदास ऐतरेय हैं। षड्गुरुशिष्य ने इनकी माता का नाम 'इतरा' बताया है जबकि भट्टभास्कर के अनुसार इनके पिता का नाम 'इतर' था जो कि ऋषिकुलोत्पन्न थे। ऐतरेय ब्राह्मण में 40 अध्याय, 8 पञ्चक तथा 258 खण्ड हैं। इसमें प्रधानतः ऋग्वेद से सम्बद्ध होने के कारण ऋत्विजों के क्रियाकलापों, विशेषतः सोमयागों के होतृपक्ष का विशद् निरूपण हुआ है। साथ ही आत्मा की अमरता, पुनर्जन्म आदि गहन विषयों पर भी प्रकाश डाला गया है। पञ्चक (पञ्चिका) क्रमानुसार इस ब्राह्मण में निरूपित विषय इस प्रकार हैं–

प्रथम तथा द्वितीय पञ्चिका में अग्निष्टोम याग (सोमयागों की प्रकृति), तृतीय चतुर्थ पञ्चिका में त्रिकाल सवन में प्रयुज्यमान शस्त्रों, अग्निष्टोम की अष्ट विकृतियों उक्थ्य, षोडशी तथा अतिरात्र यागों का निरूपण है। पञ्चम तथा षष्ठ पञ्चिका में क्रमशः द्वादशाह तथा सप्ताहाधिक अवधि तक चलने वाले सोमयागों से में होतादि ऋत्विज् के कृत्यों का विवेचन है। सप्तम पञ्चिका में राजसूय है। इसी प्रसङ्ग में ऐतरेय ब्राह्मण का प्राणस्वरूप शुनःशेप आख्यान भी वर्णित है। अष्टम पञ्चिका में ऐन्द्र महाभिषेक तथा चक्रवर्ती नरेशों के महाभिषेक का ऐतिहासिक वर्णन है। अन्तिम अध्याय में पुरोहित के राजनीतिक तथा धार्मिक महत्त्व का वर्णन है। इस प्रकार ऐतरेय ब्राह्मण का सोमयागों के नाना स्वरूपों का प्रकाशन करने के कारण विशेष महत्त्व है।

ऐतरेय ब्राह्मण के अन्तिम दश अध्याय आख्यानों की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है– शुनः शेप आख्यान। यह आख्यान सौ ऋचाओं में वर्णित है। इसे 'हरिश्चन्द्र आख्यान' भी कहा जाता है। यह आख्यान ऐतरेय ब्राह्मण के 33वें अध्याय में वर्णित है। राजा के राज्याभिषेक के अवसर पर इसे सुनाये जाने का विधान था जिससे कि वह (राजा) किसी (देवता/मनुष्य) को दिये गये वचन (सङ्कल्प) को पूरा करना अपना प्रधान धर्म समझे। सङ्क्षेप में यह आख्यान इस प्रकार है–

शुनःशेप आख्यान – पुत्रहीन इक्ष्वाकुवंशीय राजा हरिश्चन्द्र को वरुण देवता के प्रसादस्वरूप इस शर्त पर पुत्रप्राप्ति हुई कि वह (राजा) उस पुत्र को उन्हें वापस सौंप देगा किन्तु मोहवश उसमें विलम्ब के फलस्वरूप गम्भीर रोग से वे पीड़ित हो गये। अन्त में राजा ने अजीगर्त ऋषि के पुत्र शुनःशेप को खरीदकर अपने पुत्र के स्थान पर उसकी बलि देने की व्यवस्था की। यज्ञ के ऋत्विजों विश्वामित्र, वसिष्ठ तथा जमदग्नि ने जब शुनःशेप की बलि देने से मना कर दिया तब पुनः अजीगर्त ही लोभवश अपने पुत्र की बलि देने को उद्यत हुये। बाद में देवताओं की स्तुति के फलस्वरूप शुनःशेप को मुक्ति मिली। उन्होंने अपने लोभी माता-पिता का परित्याग कर दिया तथा विश्वामित्र ने उन्हें पुत्ररूप में स्वीकर कर लिया जिससे शुनःशेप का नया नाम 'देवरात विश्वामित्र' पड़ा।

ऐतरेय ब्राह्मण में 33 देवताओं का वर्णन मिलता है–**'त्र्यस्त्रंशद्वैदेवाः।'** इनमें प्रथम देवता हैं– अग्नि तथा परमदेवता हैं– विष्णु। शेष देवता इन दोनों के मध्य समाविष्ट हैं। इस प्रकार पुराणों में विष्णु को सर्वाधिक महिमाशाली देवता के रूप में प्रतिष्ठित किये जाने का मूल सूत्र इसी ब्राह्मण में मिलता है।

एतरेय ब्राह्मण पर तीन भाष्य उपलब्ध हैं– 1. सायणप्रणीत भाष्य 2. षड्गुरुशिष्यप्रणीत सुखप्रदा लघु व्याख्या, 3. गोविन्दस्वामी कृत भाष्य।

2.3.2 शांखायन (कौषीतकि) ब्राह्मण

ऋग्वेद का द्वितीय उपलब्ध ब्राह्मण शाङ्खायन है। यह ऋग्वेद की बाष्कल शाखा से सम्बद्ध है। इसका अपर नाम 'कौषीतकि ब्राह्मण' है। इस ब्राह्मण में 30 अध्याय तथा 227 खण्ड हैं। इसके प्रवचनकर्ता शाङ्खायन या कुषीतक ऋषि के पुत्र कौषीतक हैं।

ताण्ड्य ब्राह्मण में कौषीतकों को व्रात्यभावापन्नरूप में बताया गया है–**'कौषीतकानां न कश्चनाऽतिजिहीते यज्ञावकीर्णा हि।'** अतः उन्हें समाज में कोई प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त हुई। शाङ्खायन आरण्यक में प्राप्त वंश परम्परा के अनुसार विद्याक्रम से कौषीतक तथा शाङ्खायन में गुरु-शिष्य सम्बन्ध था। अतः शाङ्खायन को ही अन्तिमरूप से इस ब्राह्मण का प्रवचनकर्ता मानना चाहिये। आचार्य शाङ्खायन ने ही अपने गुरु कौषीतक के नाम पर इसका नामकरण किया होगा, किन्तु परम्परा से इसका शाङ्खायन नाम भी सुरक्षित रहा। जैसा कि चरणव्यूह की महिदास कृत टीका के इस श्लोक से पुष्ट होता है–

'उत्तरे गुर्जरे देशे वेदो बह्वृच ईरितः।
कौषीतकि ब्राह्मणं च शाखा शाङ्खायनी स्थिता।।' (चरणव्यूह टीका)

यहाँ ब्राह्मण का नाम कौषीतकि कहा गया है, किन्तु शाखा शाङ्खायनी कही गयी है। शाङ्खायन ब्राह्मण का वैशिष्ट्य यह है कि इसमें भी सोमयागों की प्रधानता है साथ ही इष्टियों तथा पशुयागों का भी प्रतिपादन हुआ है। इस ब्राह्मण में सर्वप्रथम अग्न्याधान, पुनः अग्निहोत्र, तदनन्तर पौर्णमास और सबसे अन्त में चातुर्मास्य का वर्णन है। इस प्रकार इस ब्राह्मण में यज्ञ का सम्पूर्ण विवरण मिलता है। ऐतरेय ब्राह्मण से विषय साम्य होते हुए भी शाङ्खायन ब्राह्मण का स्वतन्त्र महत्त्व अक्षुण्ण है। साथ ही ऐतरेय ब्राह्मण से अधिक प्राचीन है। इस ब्राह्मण से सम्बद्ध कोई भाष्य नहीं उपलब्ध होता है।

2.4 यजुर्वेदीय ब्राह्मण

यजुर्वेद के दो विभाग हैं– शुक्ल यजुर्वेद तथा कृष्ण यजुर्वेद। इनमें से शुक्ल यजुर्वेद से सम्बद्ध एकमात्र 'शतपथ ब्राह्मण' तथा कृष्ण यजुर्वेद से सम्बद्ध एकमात्र 'तैत्तिरीय ब्राह्मण' उपलब्ध होता है।

2.4.1 शतपथ ब्राह्मण (शुक्लयजुर्वेदीय)

शतपथ ब्राह्मण, ब्राह्मण ग्रन्थों में सर्वाधिक विशालकाय ब्राह्मण है। **"शतं पन्थानो यत्र शतपथः तत्तुल्यो ग्रन्थः"**(गणरत्नमहोदधि पृ.117) अर्थात् इसका शतपथ यह नामकरण इसकी विशालता (100 अध्यायों) के कारण ही किया गया है। इसे 'वाजसनेय ब्राह्मण' भी कहते हैं।

शतपथ ब्राह्मण के प्रवचनकर्ता वाजसनेय याज्ञवल्क्य हैं। यह ब्राह्मण शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिन तथा काण्व दोनों शाखाओं पर उपलब्ध है। माध्यन्दिन ब्राह्मण में 14 काण्ड, सौ अध्याय, 438 ब्राह्मण तथा 7624 कण्डिकायें हैं, जबकि काण्व शतपथ ब्राह्मण में 17 काण्ड, 104 अध्याय, 435 ब्राह्मण तथा 6806 कण्डिकायें हैं। यजुर्वेद की दोनों शाखाओं से सम्बद्ध इस ब्राह्मण में विषयगत साम्य है तथापि उपस्थापन क्रम में भेद है।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इसके 14 काण्डों में से नौ काण्डों में यज्ञ विवरण है। दसवें में अग्निरहस्य, ग्यारहवें काण्ड में अग्निचयनविषयक चर्चा, बारहवें में प्रायश्चित्त, तेरहवें में अश्वमेध नरमेधादि का वर्णन है। शतपथ ब्राह्मण का चौदहवाँ काण्ड आरण्यक है।

शतपथ ब्राह्मण का प्रधान विषय यागमीमांसा है। इसमें यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ कर्म कहा गया है–**"यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म"**(शत.ब्र.1.7.3.5)। इसमें सभी हविर्यागों का प्रकृतियाग अग्निहोत्र को बताया गया है। शतपथ ब्राह्मण यज्ञों में हिंसा का निषेध करता है–**'अध्वरो वै यज्ञः'** (शत. ब्रा. 3.9.2.1)। इस ब्राह्मण में स्त्रियों के उत्तराधिकार को अस्वीकृत किया गया है, साथ ही कहा गया है कि नारी के बिना पुरुष अपूर्ण है तथा यज्ञ का अधिकारी नहीं होता। (शत.ब्रा. 5.1.6.11)। मनुष्यों द्वारा अनिवार्य रूप से किये जाने वाले पञ्च महायज्ञों (भूतयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ) का परिचय भी इसी ब्राह्मण से प्राप्त होता है। महाभारत में वर्णित अनेक उपाख्यानों का मूल भी यही ब्राह्मण है।

शतपथ ब्राह्मण (काण्व शाखा) का वैशिष्ट्य यह है कि इसमें ऋषि वंशावली का जो वर्णन है, वह विशेषतः गोतम वंश का है। शतपथ ब्राह्मण का षष्ठ काण्ड से लेकर दशम काण्ड तक का अंश 'शाण्डिल्य काण्ड' नाम से प्रसिद्ध है। इस प्रकार शतपथ ब्राह्मण वेदार्थ को समझने के लिये कुञ्जी स्वरूप है।

इस ब्राह्मण पर तीन प्रामाणिक भाष्य उपलब्ध होते हैं– 1. हरिस्वामीकृत भाष्य, 2. सायणकृत भाष्य, 3. कवीन्द्रसरस्वतीकृत भाष्य।

2.4.2 तैत्तिरीय ब्राह्मण (कृष्णयजुर्वेदीय)

तैत्तिरीय ब्राह्मण कृष्णयजुर्वेदीय शाखा पर अद्यावधि सम्पूर्णरूप से उपलब्ध होने वाला एकमात्र ब्राह्मण है। इसमें कृष्णयजुर्वेदीय काठक ब्राह्मण के कुछ अंश प्राप्त होते हैं, किन्तु स्वतन्त्ररूप में अद्यावधि ये अनुपलब्ध हैं। शतपथ ब्राह्मण के समान तैत्तिरीय ब्राह्मण का पाठ भी सस्वर मिलता है, जो इसकी प्राचीनता को प्रमाणित करता है। परम्परा से तैत्तिरीय ब्राह्मण के प्रवक्ता के रूप में वैशम्पायन के शिष्य तित्तिर की प्रसिद्धि है। भट्टभास्कर तैत्तिरीय ब्राह्मण के अन्तर्गत सम्मिलित काठकभाग (3.10-12) के प्रवचनकर्ता के रूप में 'काठक' को निर्दिष्ट करते हैं। परम्परानुसार यह शाखा आन्ध्रप्रदेश नर्मदा के दक्षिण आग्नेय दिशा में तथा गोदावरी के तटवर्ती प्रदेशों में प्रचलित रही है। सुप्रसिद्ध भाष्यकार सायण की अपनी यही शाखा थी। अतः उन्होंने ब्राह्मणों में सर्वप्रथम इसी ब्राह्मण पर अपना भाष्य रचा।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में तीन काण्ड या अष्टक हैं। इन काण्डों में क्रमशः 8, 8 तथा 12 अध्याय हैं, जिनके अवान्तर खण्ड को 'अनुवाक्' कहा गया है। तैत्तिरीय ब्राह्मण के प्रथम काण्ड में अग्न्याधान, गवामयन, वाजपेय, सोम नक्षत्रेष्टि तथा राजसूय यागों का वर्णन है। द्वितीय काण्ड में अग्निहोत्र, उपहोम, सौत्रामणि, बृहस्पति सव तथा वैश्यसवादि विविध सवों का वर्णन है। प्रत्येक अनुष्ठान में उपयोगी ऋङ्मन्त्रों का भी यहाँ उल्लेख है। इस काण्ड में अनेक मन्त्रों में ऋग्वेद में उठने वाले प्रश्नों का भी उत्तर मिलता है। साथ ही उपनिषदों में निरूपित ब्रह्म तत्त्व का सङ्केत यहाँ विशद् रूप में मिलता है। इतना होते हुये भी यहाँ यज्ञ की भावना प्रधान है। यहाँ यज्ञ की वेदी को पृथ्वी का परम अन्त तथा मध्य कहा गया है–**'वेदिमाहुः परमन्तं पृथिव्याः वेदिमाहुर्भुवनस्य नाभिम्'** (तै.ब्रा. 2.7.4-10)। तृतीय काण्ड में नक्षत्रेष्टि का विस्तृत वर्णन है। चतुर्थ प्रपाठक में पुरुषमेध के लिये उपयुक्त पशुओं का वर्णन है। इसी काण्ड

के अन्तिम तीन प्रपाठक 'काठक' नाम से भी व्यवहृत होते हैं। सम्भवतः यह अंश काठकशाखीय ब्राह्मण का हो, जिसे किसी उद्देश्य विशेष से यहाँ सङ्कलित किया गया हो।

कठोपनिषद् में वर्णित नाचिकेताग्नि, उसकी वेदि, चयन, उपासनादि द्वारा मोक्ष प्राप्ति का प्रथम सूत्र इसी ब्राह्मण में प्राप्त होता है। पुराणों में उल्लिखित वराहावतार का स्पष्ट सङ्केत इसी ब्राह्मण में प्रथमतः उपलब्ध होता है। इस ब्राह्मण में विविध यज्ञानुष्ठानों में गोदक्षिणा का विधान बताया गया है। साथ ही चतुर्वर्णों और आश्रमों का भी स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इसमें **'मूर्तिस्तथा वैश्यस्य उत्पत्तिः ऋग्वेदात्, गतिस्तथा क्षत्रियस्योत्पत्तिः यजुर्वेदात्, ज्योतिस्तथा ब्राह्मणस्योत्पत्तिः सामवेदात्'** कहकर सामवेद का ब्राह्मण से सम्बन्ध जोड़ते हुये उसे (सामवेद को) वेदों में शीर्षस्थ रखा गया है। इस ब्राह्मण में अनेक मन्त्र ऋग्वेद से उद्धृत किये गये हैं।

तैत्तिरीय ब्राह्मण पर सायण तथा भट्टभास्कर प्रणीत भाष्य प्राप्त होता है।

2.5 सामवेदीय ब्राह्मण

सामवेद के ब्राह्मणों की सङ्ख्या अन्य वेदों की तुलना में सर्वाधिक है। कुमारिलभट्ट का कथन है कि सामवेद (कौथुम) के आठ ब्राह्मण ग्रन्थ हैं –

'ब्राह्मणानि हि यान्यष्टौ सरहस्यान्यधीयते। छन्दोगास्तेषु सर्वेषु न कश्चिन्नियतः स्वरः।।' (तन्त्रवार्तिक 1.3.12)

सायणाचार्य का भी यही मन्तव्य है–**'अष्टो हि ब्राह्मणग्रन्थाः प्रौढं ब्राह्मणमादिमम् षड्विंशाख्यं द्वितीयं स्यात् ततः सामविधिर्भवेत्। आर्षेयं देवताध्यायो भवेदुपनिषत् ततः। संहितोपनिषद् वंशो ग्रन्थाः अष्टावितीरितः।'** (साम.वि.ब्रा.भाष्य, उपक्रमणिका) अर्थात् सामवेदीय आठ ब्राह्मण हैं– ताण्ड्य, षड्विंश, सामविधान, आर्षेय, देवताध्यायः, उपनिषत्, संहितोपनिषत् तथा वंशब्राह्मण।

सामवेदीय इन आठ ब्राह्मणों का वर्गीकरण पारम्परिक रूप से दो वर्गों में किया जाता है– 1.ब्राह्मण, 2.अनुब्राह्मण। इनमें से ब्राह्मण ग्रन्थ वे हैं, जो ब्राह्मण के परम्परागत लक्षण का पालन करते हों। अनुब्राह्मण उन्हें कहा जाता है जो ब्राह्मण के सदृश हों। अनुब्राह्मण शब्द का उल्लेख पाणिनीय अष्टाध्यायी में भी है। जिसका अभिप्राय है– ब्राह्मण सदृश ग्रन्थ। विद्वानों के अनुसार सायण निर्दिष्ट आठ ब्राह्मणों में से ताण्ड्य तथा षड्विंश ब्राह्मण कोटि के हैं शेष छः अनुब्राह्मण की कोटि में आते हैं।

इन आठ ब्राह्मणों के अतिरिक्त सामवेद की जैमिनीय शाखा से सम्बद्ध भी तीन ब्राह्मण ग्रन्थ प्राप्त होते हैं– 1. जैमिनीय ब्राह्मण, 2. जैमिनीयार्षेय ब्राह्मण, 3. जैमनीयोपनिषद् ब्राह्मण। सामवेदीय इन ग्यारह ब्राह्मणों का परिचय अग्रलिखित है–

2.5.1 ताण्ड्य ब्राह्मण

सामवेदीय ब्राह्मणों में सर्वाधिक विशालकाय होने के कारण ताण्ड्य ब्राह्मण को 'प्रौढ ब्राह्मण' सामवेद की तण्डि शाखा से सम्बद्ध होने से इसे 'ताण्ड्य ब्राह्मण' तथा पच्चीस अध्यायों में विभक्त होने के कारण इसे 'पञ्चविंश ब्राह्मण' के नाम से भी जाना जाता है। यज्ञानुष्ठानों में उद्गाता के कृत्यों की विपुल मीमांसा होने से सामवेदीय ब्राह्मणों में इसका नितान्त महत्त्व है।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ताण्ड्य महाब्राह्मण का प्रधान प्रतिपाद्य सोमयाग है। अग्निष्टोमसंस्थ ज्योतिष्टोम से लेकर सहस्र संवत्सर साध्य सोमयागों का ही इसमें (25 अध्यायों में) मुख्यरूप से विधान किया गया है। इसके अन्तर्गत इन यागों के अङ्गभूत स्तोत्र, स्तोम और उनकी विष्टुतियों के प्रकार तथा स्तोम भाग की भी विशद् विवेचना की गयी है। अध्यायक्रमानुसार ताण्ड्य महाब्राह्मण की विषय-वस्तु इस प्रकार है –

प्रथम अध्याय में उद्‌गाता के लिये पठनीय यजुष् मन्त्रों का, द्वितीय तथा तृतीय अध्यायों में त्रिवृत् पञ्चदशादि स्तोमों की विष्टुतियाँ, चतुर्थ तथा पञ्चम अध्याय में समस्त सत्रयागों के प्रकृतिभूत गवामयन की मीमांसा की गयी है। षष्ठ अध्याय से नवम अध्याय (12वें खण्ड तक) ज्योतिष्टोम, उक्थ्य तथा अतिरात्र संस्थयागों और प्रायश्चित्त की विधियाँ वर्णित हैं। दश से पञ्चदश अध्याय तक द्वादशाह यागों का वर्णन है। वहीं षोडश से नवदश अध्यायपर्यन्त विविध एकाह याग, विंश अध्याय से द्वाविंश अध्यायों में अहीनयाग, त्रयोविंश से पञ्चविंश अध्याय तक सत्रयागों का वर्णन है।

ताण्ड्य ब्राह्मण में कुल 178 सोमयागों का वर्णन है। वैदिक वाङ्मय में इस ब्राह्मण का निम्नलिखित विशेषताओं के कारण महत्त्वपूर्ण स्थान है–

1) इसमें समस्त सोमयागों (एकाह से लेकर सत्रयाग तक) के औद्‌गात्र पक्ष का साङ्गोपाङ्ग विस्तृत वर्णन किया गया है।

2) सामगान की प्रक्रिया, विशेषतः सोमयागों में ऊह तथा ऊह्यगान किस प्रकार गाये जाते थे? इसके परिज्ञान के लिये ताण्ड्य ब्राह्मण अत्यन्त प्रामाणिक आकरग्रन्थ हैं।

3) इसमें विविध प्रकार के साम, उनके नामकरण से सम्बद्ध आख्यायिकायें तथा निरुक्तियाँ भी पुष्कल परिमाण में प्राप्त होती हैं।

4) व्रात्यों को आर्य की श्रेणी में लाने वाले व्रात्य यज्ञ का विवरण इसी ब्राह्मण में आता है। प्रवास करने वाले आचारहीन आर्य ही 'व्रात्य' कहलाते हैं। सायण ने इनके चार प्रकार बताये हैं जिनकी दोषमुक्ति के लिये विविध व्रात्ययागों का विधान इसमें बताया गया है।

5) सांस्कृतिक दृष्टि से भी इसका विशेष महत्त्व है। सरस्वती नदी के विनशन (लोपस्थल), पुनः उद्‌गम स्थल नैमिषारण्य, निषाद नाम जातिविशेष का ज्ञान इसी ब्राह्मण से होता है।

6) जैमिनीय ब्राह्मण भी यद्यपि सामवेदीयब्राह्मण है तथापि उसकी अपेक्षा यह ब्राह्मण अधिक सुव्यवस्थित है।

सायणाचार्य इसके प्रसिद्ध भाष्यकार तथा हरिस्वामी प्रधान वृत्तिकार हैं।

2.5.2 षड्विंश ब्राह्मण

षड्विंश ब्राह्मण सामवेद की कौथुम शाखा से सम्बद्ध द्वितीय महत्त्वपूर्ण ब्राह्मण है। यह ब्राह्मण पञ्चविंश ब्राह्मण (ताण्ड्य ब्राह्मण) का ही परिशिष्ट भाग है। सायण ने इसे 'ताण्डकशेष' ब्राह्मण भी कहा है क्योंकि ताण्ड्य ब्राह्मण में सोमयागों से सम्बद्ध न कहे गये विषयों का निरूपण इस ब्राह्मण में किया गया है।

इस ब्राह्मण में छः अध्याय हैं। प्रति अध्याय अवान्तर खण्डों में विभक्त हैं। इसके पाँच अध्यायों में इष्टि प्राप्ति के साधनभूत कर्मों का निरूपण होने से षष्ठ अध्याय की

विषय-वस्तु से इनका भेद है। षष्ठ अध्याय में अनिष्ट परिहार के साधनों का निरूपण है।अध्यायक्रमानुसार विषय-वस्तु का विवरण इस प्रकार है–

प्रथम अध्याय में सुब्रह्मण्या-निगद के गौरव, त्रिविध सवनों के साम, छन्दों का निरूपण, वशिष्ठगोत्रोत्पन्न ब्राह्मम् की ही 'ब्रह्म' पद पर प्रतिष्ठा, ज्ञाताज्ञात त्रुटियों के प्रायश्चित्त कर्म अर्थवादपूर्वक चरु के निर्वाप का विधान वर्णित है।

द्वितीय अध्याय में अग्निष्टोम के अन्तर्गत बहिष्पवमान के रेतस्या, धूरगानों का विधान होतादि ऋत्विजों तथा होत्राच्छंसी इत्यादि उपऋत्विजों के याग सम्बन्धी प्रकीर्ण धर्मों आदि का निरूपण है।

तृतीय अध्याय में यज्ञ में की गयी त्रुटियों से यजमान के प्रभावित होने के कारण होतादि ऋत्विजों के कर्तव्यकर्म के पूर्णज्ञान का निर्देश, अभिचारयाग (जो कि इस ब्राह्मण का वैशिष्ट्य है) तथा विविध विष्टुतियों का वर्णन है। चतुर्थ अध्याय के अवान्तर छः खण्डों में व्यूढद्वादशाहयाग के धर्मों, श्येनयाग नामक अभिचारयाग तथा उसके स्तोमों का निरूपण त्रिवृदग्निष्टोम संदंशयागों, वज्रयागादि में गीयमान सामों तथा वैश्वदेव नामक त्रयोदशाह का विशद् विवेचन है। पञ्चम अध्याय के अवान्तर 7 खण्डों में अग्निहोत्र की ज्योतिष्टोम याग से तुलना, यजमान के पात्र से आज्य गिर जाने पर प्रायश्चित्त विधान, औदुम्बरी यज्ञयूप का वैशिष्ट्य निरूपण, सन्ध्योपासनाविषयक विवरण, चन्द्रमा के घटने-बढ़ने, उनकी कलाओं स्वाहादि देवता की उत्पत्ति आदि वर्णित हैं। इसके अन्तर्गत यह भी बताया गया है कि पृथिवी, अन्तरिक्ष तथा द्युलोक ये सोमपान के तीन पात्र हैं। शुक्ल पक्ष में देवता सोमपान की दीक्षा लेते हैं तथा कृष्ण पक्ष में उसका पान करते हैं। चन्द्रमा की 16 कलाओं में से 15 कलायें उक्त पात्रों के द्वारा देवताओं के काम आ जाती हैं तथा 16वीं कला औषधियों में प्रविष्ट हो जाती है।

षड्विंश ब्राह्मण का षष्ठ अध्याय पूर्वोक्त पाँच अध्यायों से सर्वथा विलक्षण है। इस अध्याय में अद्भुत कर्मों, अनिष्टों अपशकुनों, भूकम्पादि नाना उत्पातों तथा उनकी शान्तिविषयक अनेक विधानों का वर्णन है। अतः षड्विंश ब्राह्मण के इस अध्याय की 'अद्भुत ब्राह्मण' के रूप में स्वतन्त्र मान्यता भी है।

षड्विंश ब्राह्मण श्रौतयागों के साथ ही लोकविश्वास के आधार पर समानान्तर चलने वाले धार्मिक विश्वासों से सम्बद्ध आनुष्ठानिक कृत्यों का भी श्रौतस्वरूप में ही प्रस्तावक है। आख्यानों की दृष्टि से इसमें 24 आख्यायिकायें हैं। पुराणों में पल्लवित इन्द्र-अहल्या विषयक आख्यान का मूलस्रोत षड्विंश ब्राह्मण के यही आख्यान हैं।

2.5.3 सामविधान ब्राह्मण

सामविधान ब्राह्मण का सामवेदीय ब्राह्मणों के अन्तर्गत अत्यन्त विशिष्ट स्थान है। इस ब्राह्मण का विषय ताण्ड्य तथा षड्विंश ब्राह्मण से नितान्त भिन्न है। इसमें श्रौतयाग के अतिरिक्त जादू-टोना, प्रायश्चित्त, प्रयोग, कृच्छ्रादिव्रत, काम्ययाग तथा विभिन्न लौकिक प्रयोजनानुवर्ती अभिचारकर्मादिविषयों का प्रधान रूप से निरूपण मिलता है।

सामविधान ब्राह्मण तीन प्रपाठकों तथा 24 अनुवाकों में विभक्त है। प्रपाठक क्रमानुसार इसकी विषय-वस्तु इस प्रकार है। प्रथम प्रपाठक में प्रजापति की उत्पत्ति, उनके द्वारा भौतिक सृष्टि, सामप्रशंसा, निर्वचन, सामस्वरों के देवता, देवों के निमित्त यज्ञ, यज्ञ के अनधिकारियों के लिये स्वाध्याय तथा तप का विधान, कृच्छ्र अतिकृच्छ्रव्रत, सौत्रामणी आदि प्रयोग तथा प्रायश्चित्तों का विधान है। इस प्रकार पुराणों में वर्णित व्रतों का मूल

सामविधान ब्राह्मण के इस प्रपाठक में सर्वप्रथम मिलता है, जैसे– किसी मन्त्र को जल में कमर तक खड़े होकर अपने विशेष फल की प्राप्ति आदि। ये विषय कालान्तर में धर्मशास्त्रों की भी विशेष रूप से पूर्वपीठिका बने।

द्वितीय प्रपाठक में किसी शत्रु को गाँव से भगाने के लिये चिताभस्म को चौराहे तथा शत्रु के घर या बिस्तर पर फेंकने का, सुवर्ण प्राप्ति के लिये मणिभद्र (यक्षविशेष) की मांसबलि तथा सामगायन के साथ पूजा का विधान, देवताओं की शान्ति हेतु सामविधान, राजयक्ष्मा (भयानक रोग) को दूर करने तथा दीर्घायु, सुन्दर पुत्र प्राप्ति से सम्बद्ध नाना प्रयोगों का वर्णन है।

तृतीय प्रपाठक में ऐश्वर्य, नवीन गृह में प्रवेश, आयुष्य प्राप्ति के लिये नाना अनुष्ठानों का सामगान सहित वर्णन है, साथ ही भूतप्रेत, गन्धर्व, अप्सरा, देवताओं के प्रत्यक्षीकरण के लिये सामों का प्रयोग सम्बन्धी विधान है। श्रुतिनिगादी की सिद्धिप्राप्ति के लिये यहाँ सामगान का विधान है। श्रुतिनिगादी उसे कहते हैं, जो किसी मन्त्र के मात्र एकबार श्रवण से ही उसका पाठ करने में समर्थ हो जाता है। इस प्रकार सामविधान ब्राह्मण धर्मसूत्रों में प्रतिपादित अनेक विषयों की पूर्वपीठिका है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में सामविधान ब्राह्मण के महत्त्व के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं–

1) यज्ञविषयक दृष्टिकोण के विकास क्रम को इसमें सरलता से देखा जा सकता है। यज्ञ का द्रव्यात्मक रूप, जिसमें प्रचुर धनद्रव्यादि की आवश्यकता होती है, शनैः शनैः सरल स्वरूप लेते दिखाई देते हैं। जप यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ, ब्रह्म यज्ञ के रूप में यज्ञ का जो उत्तरोत्तर विकसित रूप आरण्यकों तथा उपनिषदों में दृष्टिगोचर होता है, उसका मूल बिन्दु सामविधान ब्राह्मण में निहित है।

2) सामविधान ब्राह्मण में उन लौकिक कामनाओं की पूर्ति के लिये मात्र सामविधान का विधान किया गया है, अन्यत्र जिनके लिये प्रचुर व्यय तथा दीर्घकालसाध्य यागों का विधान किया गया है।

3) इसमें सामगान को सृष्टि के लिये जीवन साधन माना गया है।

4) देवशास्त्रीय दृष्टि से भी इसमें परम्परा से भिन्न नवीन तथ्यों का उद्‌घाटन किया गया है, जैसे– धन्वन्तरि, जो पुराणों में समुद्रमन्थन से उद्‌भूत तथा आयुर्वेद के प्रवर्तक माने गये हैं, उन्हें यहाँ वरुण के साथ समीकृत किया गया है– '**वरुणाय धन्वन्तरय**' (सा.वि.ब्रा. 1.3.8)। इसी प्रकार विनायक तथा स्कन्द का भी देवों के मध्य निर्देश मिलता है।

5) श्रौत तथा तान्त्रिक विधिविधानों (अभिचारों) का समन्वय तथा उस निमित्त साम का विधान भी इसका वैशिष्ट्य है।

6) इसमें तान्त्रिक-अभिचारों, विधि-विधानों की सिद्धि के लिये कतिपय ऐसे मन्त्र प्रतीक आये हैं जो सामवेद संहिता में नहीं प्राप्त होते।

सामविधान ब्राह्मण पर सायण तथा भरतस्वामी प्रणीत भाष्य उपलब्ध होता है।

2.5.4 आर्षेय ब्राह्मण

सामवेदीय ब्राह्मणों में आर्षेय ब्राह्मण का चतुर्थ स्थान है। इसमें तीन प्रपाठक तथा 88 खण्ड हैं। इस ब्राह्मण में सामगान के प्रसिद्ध विविध नामान्तरों का सम्बन्ध विविध (गानकर्ता) ऋषियों से सम्बद्ध किये जाने के कारण इसे 'आर्षेय ब्राह्मण' कहा जाता है।

यह ब्राह्मण सामवेद के लिये आर्षानुक्रमणी स्वरूप है। इस ब्राह्मण की रचना सूत्र शैली में हुई है। इसमें सामगायन के प्रथम प्रचारक ऋषियों, उनके गोत्रादि का विशद् वर्णन है। अतः ऐतिहासिक दृष्टि से इस ब्राह्मण का विशेष महत्त्व है।

आर्षेय ब्राह्मण में मन्त्रादि से सम्बद्ध ऋषिगोत्रादि के ज्ञान को आवश्यक बताते हुए उसे स्वर्ग, यश तथा समृद्धि आदि फलों का साधन माना गया है –

"ऋषीणां नामधेयगोत्रोपधारणम्। स्वर्ग्यं यशस्यं धन्यं पुण्यं पुर्त्यं पशव्यं ब्रह्मवर्चस्यं स्मार्त्तमायुष्यम्।" (आ.ब्रा.1.1.1.2)

2.5.5 देवताध्याय ब्राह्मण

आकार में अत्यन्त लघुकाय इस ब्राह्मण में चार खण्ड हैं। इसके प्रथम खण्ड में देवनामों का ही विविध सामों के सन्दर्भ में सङ्कलन है। द्वितीय खण्ड में छन्दों के देवताओं और वर्णों का निरूपण हुआ है। तृतीय काण्ड में सामाश्रित छन्दों के नाम की निरुक्तियाँ वर्णित हैं तथा चतुर्थ काण्ड में गायत्रसाम की आधारभूत सावित्री के विविध अङ्गों की विविधदेवरूपता का निरूपण किया गया है। यह ब्राह्मण भी सूत्रशैली में रचा गया है। इस ब्राह्मण में सामगानों के सूक्तों तथा ऋचाओं का नहीं, अपितु देवताओं के निर्णय की प्रक्रिया का कथन है।

2.5.6 उपनिषद् ब्राह्मण

उपनिषद् ब्राह्मण का दूसरा नाम छान्दोग्य ब्राह्मण भी है। इसमें 10 प्रपाठक हैं। इस ग्रन्थ के दो भाग हैं– 1. मन्त्र ब्राह्मण, 2. छान्दोग्योपनिषद्। मन्त्र तथा उपनिषद् दोनों भागों को मिलाकर एक पूर्ण ग्रन्थ बन जाता है।

प्रथम भाग 'मन्त्र ब्राह्मण' में 2 प्रपाठक हैं। प्रत्येक प्रपाठक 8-8 खण्डों में विभाजित है। इसमें गृह्यसंस्कारों में प्रयुक्त होने वाले मन्त्रों का सङ्ग्रह है जिन्हें गोभिल तथा खादिर गृह्यसूत्रों में भिन्न-भिन्न संस्कारों के अवसर पर प्रयुक्त किया गया है। इसमें कुल 268 गृह्यमन्त्र हैं।

इस मन्त्र ब्राह्मण भाग के अतिरिक्त अन्तिम 8 प्रपाठकों में छान्दोग्योपनिषद् है। इसमें तत्त्वज्ञान, तदुपयोगी कर्म तथा विविध उपासनाओं का विशद् वर्णन है। उपनिषद् ब्राह्मण पूर्णतः सामवेद का कौथुमशाखीय ब्राह्मण है।

2.5.7 संहितोपनिषद् ब्राह्मण

'संहितोपनिषद्' शब्द में प्रयुक्त 'संहिता' शब्द 'मन्त्रों के सङ्ग्रह' का पर्याय नहीं है, अपितु 'संहिता' शब्द का तात्पर्य ऐसे 'सामगान' से है, जिसका गान विशेष स्वरमण्डल से अनवरतरूप से किया जाता हो, जैसा कि सायण का कथन है–**''सामवेदस्य गीतिषु समाख्या''इति न्यायेन केवलं गानात्मकत्वात् पदाभावेन प्रसिद्धा संहिता यद्यपि न भवति तथापि तस्मिन् साम्नो सप्तस्वरा भवन्ति। क्रुष्ट प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ मन्द्रातिस्वार्या इति। तथा मन्द्रमध्यमताराणीति त्रीणि वाचः स्थानानि भवन्ति। एतेषां यः सन्निकर्षः सा संहिता।"** (सं.ब्रा.भाष्यभूमिका)

यह ब्राह्मण पाँच खण्डों में विभक्त है। इसमें सामगान से उत्पन्न होने वाले प्रभावों का वर्णन है तथा साम, सामयोनि मन्त्रों तथा पदों के परस्पर सम्बन्ध का भी विवेचन किया गया है। यास्क ने अपने ग्रन्थ निरुक्त में इस ब्राह्मण के तृतीय खण्ड से **'विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम'** यह वचन उद्धृत किया है। इससे संहितोपनिषद् ब्राह्मण की

प्रामाणिकता तथा प्रसिद्धि का तो सङ्केत मिलता ही है, साथ में निरुक्त से इसकी प्राचीनता भी सिद्ध होती है।

संहितोपनिषद् पर दो भाष्य उपलब्ध होते हैं– सायणकृत 'वेदार्थप्रकाश' तथा द्विजराजकृत भाष्य।

2.5.8 वंश ब्राह्मण

इस अतिलघ्वाकार सामवेदीय ब्राह्मण में तीन खण्ड हैं। इसमें सामवेद के उन आचार्यों की वंश-परम्परा दी गयी है, जिनसे सामवेद का अध्ययनक्रम अग्रसर हुआ है। इस ब्राह्मण में प्राप्त साक्ष्यानुसार सामवेद की परम्परा वस्तुतः स्वयम्भू ब्रह्मा से आरम्भ हुई जो विविध देवताओं के माध्यम से कश्यप ऋषि तक पहुँची तथा कश्यप ऋषि से प्रारम्भ इसकी परम्परा शर्वदत्त गार्ग्य तक पहुँची। ऋषि आचार्यों की इस परम्परा में गौतमराध से एक अन्य धारा निःसृत हुई, जो नयन तक जाती है।

इस ब्राह्मण के अब तक चार संस्करण प्रकाशित हुये हैं।

2.5.9 जैमिनीय ब्राह्मण

सामवेद की जैमिनीय शाखा से सम्बद्ध तीन ब्राह्मणों में जैमिनीय ब्राह्मण शतपथ ब्राह्मण के समान विपुलकाय तथा यागानुष्ठान के रहस्य को जानने के लिये नितान्त उपादेय तथा महत्त्वपूर्ण है। यह ब्राह्मण सम्पूर्ण रूप में उपलब्ध नहीं होता है। जैमिनीय ब्राह्मण तीन भागों में विभक्त है। प्रथम भाग में 360 खण्ड है। द्वितीय भाग में 437 तथा तृतीय भाग में 385 खण्ड है अर्थात् कुल खण्डों की सङ्ख्या 1182 है।

जैमिनीय ब्राह्मण के आदि तथा अन्त में जैमिनि का स्तवन किया गया है। सामवेद की इसी शाखा का जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण भी इस महान् ब्राह्मण ग्रन्थ का अंशमात्र है जो 'गायत्र्युपनिषद्' के नाम से विख्यात है।

जैमिनीय ब्राह्मण तथा ताण्ड्य ब्राह्मण की विषय सामग्री में अत्यधिक समानता है, दोनों में ही सोमयागगत औद्गात्रतन्त्रादि का निरूपण है, किन्तु दोनों में वैषम्य यह है कि जैमिनीय ब्राह्मण में उन्हीं विषयों का विस्तार से वर्णन है, जबकि ताण्ड्य ब्राह्मण में अपेक्षाकृत कम विस्तार है।

लोक में एक प्रसिद्ध सूक्ति "दीवारों के भी कान होते हैं। अतः धीरे बोलो।" इसी जैमिनीय ब्राह्मण में प्राप्त होती है–**'मोच्चौरिति होवाच कर्णिनी वै भूमिरिति।'**

जैमिनिशाखीय ब्राह्मणों की भाषा की विशेषता यह है कि इसमें ऋग्वेद के समान 'ळ' व्यञ्जन सुरक्षित है।

2.5.10 जैमिनीयार्षेय ब्राह्मण

जिस प्रकार जैमिनीय ब्राह्मण तथा कौथुम शाखीय ब्राह्मणों की सामग्री में समानता है, ठीक उसी प्रकार जैमिनीयार्षेय ब्राह्मण की वर्ण्य सामग्री भी कौथुमशाखीय आर्षेय ब्राह्मण के समकक्ष है। कौथुमशाखीय आर्षेय ब्राह्मण के समान इसमें भी प्रारम्भ के प्रथम दो वाक्यों को छोड़कर स्वाध्याय तथा यज्ञ की दृष्टि से ऋषि, छन्द तथा देवता के ज्ञान पर बल दिया गया है। ग्रामगेय गानों के ऋषि निरूपण में अध्यायों और खण्डों की व्यवस्था और विन्यास भी प्रायः समान है। कहीं-कहीं अवान्तर भेद के कारण गानक्रम में भिन्नता है। यह ब्राह्मण कौथुमशाखीय आर्षेय ब्राह्मण से विषयगत साम्य रखते हुये भी अपेक्षाकृत उससे सङ्क्षिप्त है।

2.5.11 जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण

जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण में चार अध्याय हैं। अध्यायों का अवान्तर विभाजन अनुवाक् तथा खण्डों में है। इस ब्राह्मण का विशेष महत्त्व पुरातन भाषा, शब्दावली वैयाकरणिक रूपों और ऐसे ऐतिहासिक तथा देवशास्त्रीय आख्यानों के कारण हैं, जिसमें बहुविध प्राचीन विश्वास तथा रीतियाँ सुरक्षित हैं। इस ब्राह्मण को कौथुमशाखीय सभी ब्राह्मणों से प्राचीन होने के कारण प्राचीन ब्राह्मणों की श्रेणी में रखा जाता है। इस ब्राह्मण में कुछ ऐसी प्राचीन धार्मिक मान्यतायें निहित हैं, जिनका अन्यत्र उल्लेख नहीं मिलता, उदाहरण के लिये– मृत व्यक्तियों का पुनः प्राकट्य तथा प्रेतात्मा द्वारा उन व्यक्तियों का मार्गनिर्देशन करना, जो रहस्यात्मक सिद्धियों की प्राप्ति के लिये साधकों की खोज में रत हैं। निशीथ वेला में श्मशान साधना से सम्बद्ध उन कृत्यों का भी इसमें उल्लेख है, जो अतिमानवीय शक्ति को प्राप्त करने के लिये चिता भस्म के समीप किये जाते हैं।

जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण में ओङ्कार हिङ्कार की महत्ता पर विशेष बल दिया गया है। इसमें कहा गया है कि यही वह अक्षर है जिससे ऊपर कोई नहीं उठ सकता। यही ओम् परम ज्ञान तथा बुद्धि का आदि कारण है। इसी से अष्टाक्षरा गायत्री की उत्पत्ति हुई। गायत्री से ही प्रजापति को तथा इसी से अन्य देवताओं और ऋषियों को अमरत्व की प्राप्ति हुई–**'तदेतदमृतं गायत्रम्। एतेन वे प्रजापतिरमृतत्वमगच्छत्। एतेन देवाः। एतेनर्षयः।'** (जैमि. उ. ब्रा. 3.7.3.1)

जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण जैमिनीयब्राह्मण का ही एक अंश रूप है। अन्य ब्राह्मण ग्रन्थों के समान इस ब्राह्मण में यागविधियों का विशेष उल्लेख नहीं है। इसमें वर्णित विषय-वस्तु आरण्यक तथा उपनिषदों के अधिक समीप हैं।

इसका समापन–**"सैषा शाट्यायनी गायत्रस्योपनिषद् एवमुपासितव्या।"** इस कथन से हुआ है। तदनन्तर केनोपनिषद् का आरम्भ होता है। यह उपनिषद् 'गायत्र्युपनिषद्' के नाम से भी विख्यात है।

2.6 अथर्ववेदीय ब्राह्मण

अथर्ववेद से सम्बद्ध एकमात्र ब्राह्मण गोपथ ब्राह्मण है। इसका परिचय इस प्रकार है–

2.6.1 गोपथ ब्राह्मण

गोपथ ब्राह्मण अथर्ववेद की पैप्पलाद शाखा से सम्बद्ध ब्राह्मण है। इस ब्राह्मण के प्रवचनकर्ता गोपथ ऋषि हैं। गोपथ ब्राह्मण के दो भाग हैं– 1. पूर्वगोपथ, 2. उत्तरगोपथ।

पूर्वगोपथ में 5 प्रपाठक तथा उत्तरगोपथ में 6 प्रपाठक हैं। इन प्रपाठकों का विभाजन 258 कण्डिकाओं में किया गया है। यह ब्राह्मण, 'ब्राह्मणसाहित्य' में सबसे अर्वाचीन माना जाता है। विषय-वस्तु की दृष्टि से पूर्वगोपथ के पाँच प्रपाठकों में क्रमशः ओङ्कार तथा गायत्री की महिमा, ब्रह्मचारियों के विशिष्ट नियम, यज्ञ, ऋत्विजों के क्रिया-कलाप, दीक्षा तथा संवत्सर का वर्णन है। तदनन्तर अश्वमेध, पुरुषमेध तथा अग्निष्टोमादि यज्ञों का भी निरूपण किया गया है। उत्तरगोपथ में विविध यज्ञों के साथ-साथ आख्यायिकाओं का भी सन्निवेश है।

गोपथ ब्राह्मण कतिपय नवीन विचारधाराओं के कारण भी महत्त्वपूर्ण माना जाता है जैसे– ब्रह्मा द्वारा कमल के ऊपर ब्रह्मा का उदय, प्रत्येक मन्त्र के उच्चारण से पूर्व

ओङ्कार का उच्चारण किसी अनुष्ठान का आरम्भ करने से पूर्व तीन बार आचमन करना इत्यादि।

इसके अतिरिक्त गोपथ ब्राह्मण के अन्य वैशिष्ट्य भी हैं–

1) इसमें (गोपथ ब्राह्मण में) ऋग्वेदादि प्रसिद्ध चार वेदों के अतिरिक्त पाँच अन्य वेदों का भी परिचय मिलता है– सर्पवेद, पिशाचवेद, असुरवेद, इतिहासवेद तथा पुराणवेद।

2) ऋग्वेद में वरुण आकाश के देवता हैं किन्तु धीरे-धीरे वे जल के देवता के रूप में कैसे प्रतिष्ठित हुए? इसका विवरण गोपथ ब्राह्मण में मिलता है।

3) अथर्ववेद तथा उससे सम्बद्ध भृगु, अङ्गिरा तथा अथर्वा प्रभृति ऋषियों के आविर्भाव पर विशिष्टरूप से प्रकाश पड़ता है।

4) निर्वचन की दृष्टि से अथर्ववेद के निर्वचन महत्त्वपूर्ण हैं। निरुक्त में भी गोपथ ब्राह्मण से अनेक निर्वचनों को उद्धृत किया गया है, जैसे– प्रजापालन के कारण 'प्रजापति', भरण करने के कारण 'भृगु' शब्दों का प्रयोग स्पष्ट किया गया है।

5) व्याकरण की उस शब्दावली, जिसका विकास सूत्रकाल में हुआ, का उल्लेख गोपथ ब्राह्मण में मिलता है। धातु, प्रातिपदिक, विभक्ति, प्रत्यय, स्थानानुप्रदानादि कुछ ऐसे ही शब्द हैं। अव्यय की वही परिभाषा यहाँ मिलती है जो अद्यावधि प्रचलित है।

6) गोपथ ब्राह्मण का ऐतिहासिक तथा भौगोलिक महत्त्व भी है। वसिष्ठ, विश्वामित्र, जमदग्नि, गौतम, भारद्वाज, अगस्त्यादि ऋषियों के आश्रम के रूप में, विपाशा नदी, वसिष्ठ शिला, अगस्त्य तीर्थ आदि का उल्लेख यहीं मिलता है।

गोपथ ब्राह्मण वेदान्तश्रेणी का ब्राह्मण माना जाता है।

2.7 सारांश

वेदों का वह भाग, जिसमें वैदिक यज्ञों के लिये वेद-मन्त्रों के विधानादि की विस्तृत व्याख्या की गयी है, 'ब्राह्मण' ग्रन्थ कहलाते हैं। 'ब्रह्म' अर्थात् यज्ञविषयक प्रतिपादक होने से इनको 'ब्राह्मण' कहा गया है। ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रणयन ब्रह्मावर्त प्रदेश में लगभग 3000 ई.पू. से 2000 ई.पू. के मध्य हुआ। ब्राह्मणों का प्रधान प्रतिपाद्य विषय यज्ञों की सर्वाङ्गपूर्ण मीमांसा करना है। इसकी प्रतिष्ठा के वहाँ दो आधार हैं– विधि तथा अर्थवाद। विधियाँ दश हैं– हेतु, निर्वचन, निन्दा, प्रशंसा, संशय, विधि, परक्रिया, पुराकल्प, व्यवधारण-कल्पना, उपमान। इन दश विधियों में भी प्रधानता विधियों की ही है, शेष जो अन्य प्रकार हैं, वे विधियों के ही पोषक हैं। उन्हें मीमांसकों ने 'अर्थवाद' कहा है। विषय विवेचन की दृष्टि से ब्राह्मणों के प्रधानतः सात विषय हैं– विधि, विनियोग, हेतु, अर्थवाद, निर्वचन, आख्यान तथा उपनिषद् भाग।

वैदिक संहितायें चार हैं– ऋक् संहिता, यजुष् संहिता, साम संहिता तथा अथर्व संहिता। इन संहिताओं की विविध शाखाओं पर ऋषियों द्वारा अनेक ब्राह्मण रचे गये। इनमें अनेक ब्राह्मण अनुपलब्ध हैं। उपलब्ध ब्राह्मणों में संहिताक्रम से सर्वप्रथम ऋग्वेद संहिता पर दो ब्राह्मण उपलब्ध होते हैं– 1. ऋग्वेद की शाकल शाखा से सम्बद्ध ऐतरेय ब्राह्मण (प्रवचनकर्ता महिदास ऐतरेय) 2. ऋग्वेद की वाष्कल शाखा से सम्बद्ध शाङ्खायन ब्राह्मण (कौषीतकि ब्राह्मण)। इनमें सोमयागों से सम्बद्ध प्रायः सम्पूर्ण विवरण प्राप्त होता है। यजुर्वेदीय ब्राह्मणों में शुक्ल यजुर्वेद पर केवल एक ही ब्राह्मण उपलब्ध होता है– शतपथ ब्राह्मण। इसका सम्बन्ध शुक्ल यजुर्वेद की काण्व तथा माध्यन्दिन

दोनों शाखाओं से है तथा सभी ब्राह्मणों में सबसे विशालकाय ब्राह्मण है, जिसमें यज्ञ से जुड़े रहस्यात्मक पक्षों पर प्रकाश डाला गया है। कृष्ण यजुर्वेद से सम्बद्ध भी केवल एक ही ब्राह्मण उपलब्ध है– तैत्तिरीय ब्राह्मण। इस ब्राह्मण में वर्णाश्रम व्यवस्था से सम्बन्धित विवरण भी मिलता है। सामवेद की कौथुमीय, जैमिनीय तथा राणायनीय शाखाओं में से केवल कौथुमीय तथा जैमिनीय शाखाओं पर ही ब्राह्मण ग्रन्थ उपलब्ध हैं। इनमें प्रथम कौथुमीय शाखा सम्बद्ध 8 ब्राह्मण उपलब्ध होते हैं– ताण्ड्य, षड्विंश, सामविधान, आर्षेय, देवताध्याय, उपनिषद्, संहितोपनिषद् तथा वंशब्राह्मण। इनमें ताण्ड्य तथा षड्विंश 'ब्राह्मण कोटि' के ग्रन्थ हैं। शेष 6 'अनुब्राह्मण' माने जाते हैं। इन ब्राह्मणों में सर्वाधिक महत्त्व ताण्ड्य ब्राह्मण का है। जैमिनीय शाखा पर 3 ब्राह्मण मिलते हैं– 1. जैमिनीय ब्राह्मण, 2. जैमिनीयार्षेय ब्राह्मण, 3. जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण। अथर्ववेद की नौ शाखाओं में से पैप्पलादशाखा पर ही एक ब्राह्मण प्राप्त होता है– गोपथ ब्राह्मण। इसमें कुछ अंश ताण्ड्य ब्राह्मण तथा कुछ अंश शतपथ ब्राह्मण से लिया गया है। अतः ये वेदान्त श्रेणी का ग्रन्थ है। इस प्रकार उपलब्ध ब्राह्मणों की सङ्ख्या 15 है।

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास– प्रथम खण्ड (वेद), बलदेव उपाध्याय, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ।
2) संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
3) वैदिकवाङ्मयस्येतिहासः, आचार्यजगदीशचन्द्रमिश्रः, चौखम्बासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
4) वैदिक साहित्य – बलदेव उपाध्याय, शारदा संस्थान वाराणसी।
5) वैदिक साहित्य – पं. रामगोविन्द त्रिवेदी, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
6) वैदिक साहित्य और संस्कृति, आचार्य वाचस्पति गैरोला, संवर्तिका प्रकाशन, प्रयागराज (इलाहाबाद)
7) वैदिक साहित्य और संस्कृति का स्वरूप, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली

2.9 अभ्यास प्रश्न

1) 'ब्राह्मण' शब्द से क्या अभिप्राय है? उनके देशकाल का परिचय प्रस्तुत कीजिये।
2) ऋग्वेदीय ब्राह्मणों का सम्पूर्ण परिचय लिखिये।
3) यजुर्वेदीय ब्राह्मणों का समग्र परिचय प्रस्तुत कीजिये।
4) सामवेदीय ब्राह्मणों पर एक निबन्ध लिखिये।
5) अधोलिखित में से किन्हीं चार ब्राह्मणों पर प्रकाश डालिये –

शतपथ ब्राह्मण, आर्षेय ब्राह्मण, कौषीतकि ब्राह्मण, जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण, गोपथ ब्राह्मण, ताण्ड्य ब्राह्मण।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY